

[2025] 4 एस.सी.आर. 32 : 2025 आईएनएससी 350

प्रदीप निरंकारनाथ शर्मा

बनाम

गुजरात राज्य एवं अन्य

(आपराधिक अपील संख्या 1313/2025)

17 मार्च 2025

[विक्रम नाथ* और प्रसन्न बी. वराले, जे. जे.]

विचारार्थ प्रश्न

क्या ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार और अन्य. [2013] 14 एस. सी. आर. 713 में निर्णय एक आत्यन्तिक नियम बनाता है कि प्राथमिकी दर्ज करने से पहले प्रत्येक मामले में प्रारंभिक जांच की जानी चाहिए।

सारांश टिप्पणियाँ

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 154 - अपीलकर्ता ने ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार और अन्य पर भरोसा किया, यह तर्क देने के लिए कि आधिकारिक पद के दुरुपयोग के आरोपों से जुड़े मामलों में प्राथमिकी दर्ज करने से पहले प्रारंभिक जांच होनी चाहिए- सच्चाई:

अभिनिर्धारित किया गया: ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार और अन्य मामले में जैसा कि साफ किया गया है, शुरुआती जांच का दायरा उन स्थितियों तक सीमित है जहां मिली जानकारी से पहली नज़र में कोई संज्ञेय अपराध सामने नहीं आता, लेकिन उसे सत्यापन करने की ज़रूरत होती है - हालांकि, ऐसे मामलों में जहां जानकारी से साफ तौर पर कोई संज्ञेय अपराध सामने आता है, पुलिस के पास FIR दर्ज करने से पहले शुरुआती जांच करने का कोई अधिकार नहीं है - ललिता कुमारी मामले का फैसला यह कोई पक्का नियम नहीं बनाता कि हर मामले में FIR दर्ज करने से पहले शुरुआती जांच की जानी चाहिए - बल्कि, यह उस स्थापित सिद्धांत की पुष्टि करता है कि जब मिली जानकारी से पहली नज़र में कोई संज्ञेय अपराध सामने आता है, तो पुलिस अधिकारियों की यह ज़िम्मेदारी है कि वे FIR दर्ज करें। [पैरा 12]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 154- उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता की उस

* लेखक

याचिका को खारिज कर दिया जिसमें प्रत्यर्थी अधिकारियों को उनकी आधिकारिक क्षमता में किए गए कार्यों के लिए उनके खिलाफ कोई भी प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने से पहले प्रारंभिक जांच करने परमादेश देने की मांग की गई थी- सच्चाई:

अभिनिर्धारित किया गया: मौजूदा मामले में, अपीलकर्ता पर लगे आरोप सरकारी पद के दुरुपयोग और सार्वजनिक पद में रहते हुए भ्रष्टाचार से जुड़े हैं - ऐसे आरोप सीधे तौर पर संज्ञेय अपराधों की श्रेणी में आते हैं, और ऐसे मामलों में FIR दर्ज करने से पहले शुरुआती जांच की कोई कानूनी ज़रूरत नहीं है - अपीलकर्ता का यह तर्क कि उसके खिलाफ गलत इरादे से लगातार FIR दर्ज की गई हैं, यह एक ऐसा मामला है जिसकी जांच और ट्रायल के दौरान जांच की जा सकती है - अपीलकर्ता के पास कानून के तहत पर्याप्त उपाय हैं, जिसमें धारा 482 CrPC के तहत झूठी FIR को रद्द करवाने का अधिकार, जमानत के लिए आवेदन करने का अधिकार, और जांच अधिकारियों के किसी भी गैर-कानूनी काम को सही फोरम में चुनौती देने का अधिकार शामिल है।[पैरा 13]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973- एफ. आई. आर.- सांविधिक ढांचा- न्यायिक अतिक्रमण- क्या यह न्यायालय अपीलकर्ता के खिलाफ एफ. आई. आर. दर्ज करने पर रोक लगाने के लिए एक व्यापक निर्देश जारी कर सकता है या उससे जुड़े भविष्य के सभी मामलों में प्रारंभिक जांच को अनिवार्य कर सकता है:

अभिनिर्धारित किया गया: यह न्यायालय अपीलकर्ता के खिलाफ एफ. आई. आर. दर्ज करने पर रोक लगाने या उससे जुड़े भविष्य के सभी मामलों में प्रारंभिक जांच को अनिवार्य करने के लिए एक व्यापक निर्देश जारी नहीं कर सकता है- ऐसा निर्देश न केवल सी. आर. पी. सी. के वैधानिक ढांचे के विपरीत होगा, बल्कि न्यायिक पहुंच के बराबर भी होगा-जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा सही ढंग से देखा गया है, अदालतें वैधानिक प्रावधानों को फिर से नहीं लिख सकती हैं या अतिरिक्त प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों को लागू नहीं कर सकती हैं जो कानून द्वारा विचार नहीं किए गए हैं।[पैरा 14]

उद्धृत न्यायिक निर्णय

ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार एवं अन्य [2013] 14 एस.सी.आर. 713(2014) 2 एस.सी.सी. 1 - पर भरोसा किया गया।

अधिनियमों की सूची

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973।

मुख्य शब्दों की सूची

धारा 154 दंड प्रक्रिया संहिता ; एफआईआर दर्ज करने से पूर्व प्रारंभिक जाँच; संज्ञेय अपराध; वैधानिक दायित्व; न्यायिक अतिक्रमण; आधिकारिक पद का दुरुपयोग; भ्रष्टाचार; वित्तीय अनियमितताएँ; क्रमिक / लगातार एफआईआर; जाँच के विरुद्ध पूर्ण संरक्षण

मामला सामने आ रहा है

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय: आपराधिक अपील संख्या 1313 /2025

एससीए संख्या 1321/2024 में गुजरात उच्च न्यायालय अहमदाबाद के दिनांक 31.01.2024 के निर्णय और आदेश से

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

अधिवक्ता अपीलकर्ता के लिए:

कपिल सिब्बल, देवदत्त कामत, वरिष्ठ अधिवक्ता, दिव्येश प्रताप सिंह, सुश्री रूपाली फ्रांसेस्का सैमुअल, राजेश इनामदार, अजय देसाई, अमित सांगवान।

अधिवक्ता प्रत्यर्चीगण के लिए:

तुषार मेहता, सॉलिसिटर जनरल; मितेश अमीन, अतिरिक्त महाधिवक्ता; मनींदर सिंह, वरिष्ठ अधिवक्ता; सुश्री स्वाति घिल्डियाल; कानू अग्रवाल; सुश्री नेहा सिंह।

उच्चतम न्यायालय का निर्णय / आदेश

निर्णय

विक्रम नाथ, जे.

1. अनुमति दी गयी।
2. यह अपील गुजरात हाई कोर्ट द्वारा 31.01.2024 को आर/विशेष आपराधिक आवेदन (निर्देश) संख्या 1321/ 2024 में दिए गए फैसले और आदेश को चुनौती देते हुए दायर की गई है, जिसमें हाई कोर्ट ने अपीलकर्ता की उस याचिका को खारिज कर दिया था जिसमें उसने प्रत्यर्ची अधिकारियों को उसके आधिकारिक पद पर रहते हुए किए गए कामों के लिए उसके खिलाफ कोई भी प्रथम सूचना रिपोर्ट¹ दर्ज करने से पहले शुरुआती जांच करने का निर्देश देने वाली रिट ऑफ मैंडमस जारी करने की मांग की थी।
3. वर्तमान अपील की ओर ले जाने वाले तथ्य यह हैं कि अपीलकर्ता एक सेवानिवृत्त भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई. ए. एस.) अधिकारी हैं जिन्होंने 2003 और 2006 के बीच कच्छ जिले, गुजरात के कलेक्टर सहित विभिन्न प्रशासनिक क्षमताओं में कार्य किया। कलेक्टर के रूप में उनके कार्यकाल के दौरान पारित भूमि आवंटन आदेशों में

कथित अनियमितताओं के संबंध में अपीलकर्ता के खिलाफ कई प्राथमिकियां दर्ज की गई हैं। अपीलकर्ता के खिलाफ आरोप मुख्य रूप से आधिकारिक पद के दुरुपयोग, भ्रष्ट प्रथाओं और सरकारी भूमि के आवंटन में वित्तीय अनियमितताओं से संबंधित हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि इस संबंध में पहली प्राथमिकी 2010 में दर्ज की गई थी, जिसके बाद अपीलकर्ता के खिलाफ लगातार प्राथमिकी दर्ज की गई थी। अपीलकर्ता इन मामलों के संबंध में इस अवधि के दौरान न्यायिक हिरासत में रहा है और सक्षम न्यायालयों के समक्ष मुकदमे चल रहे हैं।

4. अनेक एफ. आई. आर. दर्ज किए जाने से व्यथित होकर, अपीलकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 20, 21, 22 और 226 के तहत एक रिट याचिका के माध्यम से गुजरात उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। रिट याचिका में मुख्य राहत यह मांगी गई थी कि मेंडमस की रिट या कोई अन्य उचित रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए, जिसमें प्रत्यर्थी अधिकारियों को उसके खिलाफ कोई और एफ आई आर दर्ज करने से पहले प्रारंभिक जांच करने का निर्देश दिया जाए। अपीलकर्ता ने तर्क दिया कि प्रारंभिक जांच किए बिना आपराधिक मामलों के क्रमिक और मनमाने पंजीकरण के कारण उनके मूल अधिकार, विशेष रूप से अनुच्छेद 21 के तहत उनके स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन किया जा रहा है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि ये प्राथमिकियां उन्हें परेशान करने और लंबित मामलों में प्रभावी ढंग से अपना बचाव करने से रोकने के लिए एक गुप्त उद्देश्य से दर्ज की गई थीं। अपनी दलीलों के समर्थन में, अपीलकर्ता ने **ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार और अन्य²** मामले में इस माननीय न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए तर्क दिया कि प्राथमिकी दर्ज करने से पहले आधिकारिक पद के दुरुपयोग के आरोपों से जुड़े मामलों में प्रारंभिक जांच की जानी चाहिए।
5. गुजरात राज्य ने याचिका का विरोध करते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष तर्क दिया कि अपीलकर्ता द्वारा मांगी गई राहत कानूनी रूप से असमर्थनीय है। यह तर्क दिया गया था कि कानून की तय स्थिति के तहत, एक बार संज्ञेय अपराध के बारे में जानकारी प्राप्त होने के बाद, पुलिस अधिकारी दंड प्रक्रिया संहिता 1973³ की धारा 154 के तहत एक प्राथमिकी दर्ज करने के लिए कर्तव्यबद्ध हैं, जिसमें कहा गया है कि अनिवार्य प्रारंभिक जांच के लिए अपीलकर्ता के अनुरोध को मंजूरी देना उसे जांच के खिलाफ एक व्यापक सुरक्षा प्रदान करने के बराबर होगा, जो कानून के तहत अस्वीकार्य है। राज्य ने यह भी प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ता द्वारा **ललिता कुमारी (उपर्युक्त)** पर किया गया भरोसा गलत है, क्योंकि उस निर्णय में स्वयं यह स्पष्ट किया गया है कि प्रारंभिक

जाँच केवल सीमित श्रेणियों के मामलों में ही आवश्यक है, जैसे— पारिवारिक विवाद, वाणिज्यिक/व्यावसायिक मामले तथा चिकित्सकीय लापरवाही के प्रकरण; और जहाँ संज्ञेय अपराधों के स्पष्ट आरोप मौजूद हों, वहाँ प्रारंभिक जाँच की आवश्यकता नहीं होती।

6. उच्च न्यायालय ने दोनों पक्षों को सुनने के बाद अपीलकर्ता की रिट याचिका को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय ने कहा कि एक बार शिकायत में संज्ञेय अपराध का खुलासा होने के बाद, पुलिस अधिकारी एक प्राथमिकी दर्ज करने और जांच करने के लिए एक वैधानिक दायित्व के तहत हैं। **ललिता कुमारी (उपरोक्त)** में निर्धारित सिद्धांतों पर भरोसा करते हुए, उच्च न्यायालय ने कहा कि प्रारंभिक जांच केवल उन मामलों में आवश्यक है जहां इस बात पर संदेह है कि क्या संज्ञेय अपराध का खुलासा किया गया है। हालांकि, वर्तमान मामले में, जहां अपीलकर्ता के खिलाफ भ्रष्टाचार और आधिकारिक पद के दुरुपयोग के स्पष्ट आरोप लगाए गए हैं, पुलिस अधिकारियों को प्राथमिकी दर्ज करने से रोकने का कोई विवेकाधिकार नहीं है। उच्च न्यायालय ने आगे कहा कि अपीलकर्ता से जुड़े सभी मामलों में प्रारंभिक जांच के लिए एक व्यापक निर्देश देना न्यायिक कानून के बराबर होगा, जो अनुज्ञेय नहीं है। उच्च न्यायालय ने कहा कि सी. आर. पी. सी. प्राथमिकी दर्ज करने से पहले किसी आरोपी को स्पष्टीकरण देने का अवसर प्रदान नहीं करता है। इन निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय ने रिट याचिका को खारिज कर दिया, यह मानते हुए कि अपीलकर्ता हस्तक्षेप के लिए एक मामला बनाने में विफल रहा था।
7. अपनी रिट याचिका खारिज होने से व्यथित अपीलकर्ता ने वर्तमान अपील के माध्यम से इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है। इस न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता द्वारा उठाया गया प्राथमिक तर्क यह है कि उसके खिलाफ क्रमिक तरीके से कई प्राथमिकियां दर्ज की गई हैं, विशेष रूप से पिछले मामलों में जमानत प्राप्त करने के बाद, और प्रारंभिक जांच के बिना इस तरह की क्रमिक प्राथमिकियों का पंजीकरण प्रक्रिया का दुरुपयोग है। यह तर्क दिया गया है कि एफ. आई. आर. का इस तरह का मनमाना पंजीकरण भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 में निहित निष्पक्षता और उचित सम्यक प्रक्रिया के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है। अपीलकर्ता ने एक बार फिर **ललिता कुमारी (उपरोक्त)** पर यह दावा करने के लिए भरोसा किया है कि प्रत्यर्थी अधिकारियों को उसके खिलाफ लगातार प्राथमिकी दर्ज करने से पहले प्रारंभिक जांच करनी चाहिए थी।
8. हमने अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री कपिल सिब्बल तथा

प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान सॉलिसिटर जनरल श्री तुषार मेहता को विस्तार से सुना।

9. अपीलकर्ता की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया कि अपीलकर्ता, एक सेवानिवृत्त आई. ए. एस. अधिकारी, को कई प्राथमिकियों के पंजीकरण द्वारा से निरंतर और अनुचित उत्पीड़न का सामना करना पड़ा है, जो सभी जिला कच्छ के कलेक्टर के रूप में कार्य करते हुए उनकी आधिकारिक क्षमता में किए गए कार्यों से संबंधित हैं। यह तर्क दिया गया कि अपीलकर्ता द्वारा अपने आधिकारिक कार्यकाल के दौरान लिए गए कुछ भूमि आवंटन संबंधी निर्णयों के संदर्भ में पहली एफआईआर दर्ज किए जाने के बाद एक ऐसा पैटर्न सामने आया, जिसमें जमानत पर रिहा होते ही उसके विरुद्ध क्रमिक/लगातार एफआईआर दर्ज की जाती रहीं, जिससे उसकी निरंतर कारावास सुनिश्चित हो सके। श्री सिब्बल ने प्रस्तुत किया कि किसी भी प्रारंभिक जाँच के बिना, यह आकलन किए बिना कि कोई संज्ञेय अपराध बनता है या नहीं, इस प्रकार क्रमिक/लगातार एफआईआर का पंजीकरण प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों तथा संविधान के अनुच्छेद 14, 20 और 21 के अंतर्गत निहित स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार का उल्लंघन है। **ललिता कुमारी (सुप्रा)** मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए, यह आग्रह किया गया कि उन मामलों में प्रारंभिक जांच अनिवार्य है जहां आरोप प्रथमदृष्टया संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करते हैं। यह भी तर्क दिया गया कि 2015 में अपीलकर्ता की सेवानिवृत्ति के बावजूद लगातार प्राथमिकियां दर्ज करने में राज्य का आचरण, किसी भी कथित गलत काम की जांच करने के प्रामाणिक प्रयास के बजाय, उसे परेशान करने के एक गुप्त उद्देश्य को दर्शाता है। इसलिए यह प्रार्थना की गई कि प्रत्यर्थी अधिकारियों को निर्देश दिया जाए कि वे अपीलकर्ता के खिलाफ कोई और एफआईआर दर्ज करने से पहले अनिवार्य रूप से प्रारंभिक जांच करें और उसे कोई भी नई जांच शुरू होने से पहले अपना स्पष्टीकरण देने का अवसर दिया जाए।
10. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी- राज्य की ओर से पेश हुए विद्वान सॉलिसिटर जनरल ने अपील का जोरदार विरोध करते हुए तर्क दिया कि याचिका स्वयं कानूनी रूप से असमर्थनीय और गलत धारणा है। यह प्रस्तुत किया गया था कि अपीलकर्ता ने एक व्यापक आदेश की मांग की है जिसमें अधिकारियों को प्राथमिकी दर्ज करने से पहले प्रारंभिक जांच करने का निर्देश दिया गया है, जो कानून के तय किए गए सिद्धांतों के तहत अस्वीकार्य है। यह आगे तर्क दिया गया कि दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 154 के तहत, एक प्राथमिकी दर्ज करना अनिवार्य है यदि प्राप्त जानकारी एक संज्ञेय अपराध के

होने का खुलासा करती है, और पुलिस को **ललिता कुमारी (उपरोक्त)** में निर्धारित सीमित परिस्थितियों को छोड़कर प्रारंभिक जांच करने का कोई विवेकाधिकार नहीं है। राज्य ने इस बात पर भी जोर दिया कि ऐसा कोई वैधानिक प्रावधान नहीं है जिसके तहत आरोपी को प्राथमिकी दर्ज करने से पहले अपनी स्थिति स्पष्ट करने का अवसर दिया जाए, क्योंकि इस तरह की प्रथा गंभीर अपराधों के आरोपी व्यक्तियों को अनुचित लाभ देने के बराबर होगी और जांच प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न करेगी। इसके अतिरिक्त, यह तर्क दिया गया कि अपीलकर्ता की याचिका, यदि मंजूर की जाती है, तो एक खतरनाक मिसाल कायम होगी जिसमें भ्रष्टाचार या दुराचार के आरोपी लोक सेवक पूर्व-एफ. आई. आर. सुनवाई की मांग करके प्रतिरक्षा का दावा कर सकते हैं। प्रत्यर्थी ने आगे तर्क दिया कि मौजूदा कानूनी ढांचे के तहत अपीलकर्ता के लिए पर्याप्त कानूनी सुरक्षा उपाय उपलब्ध हैं, जिसमें अग्रिम जमानत लेने का अधिकार और उपयुक्त मंचों के समक्ष दुर्भावनापूर्ण अभियोजन को चुनौती देने का अधिकार शामिल है। तदनुसार, यह आग्रह किया गया कि याचिका को खारिज कर दिया जाए।

11. हमने अपीलकर्ता की दलीलों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है और अभिलेखों का अवलोकन किया है। संज्ञेय अपराध के मामलों में एफ. आई. आर. दर्ज करने के संबंध में कानूनी स्थिति अच्छी तरह से तय की गई है। इस न्यायालय ने, **ललिता कुमारी (उपरोक्त)** मामले में, स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया है कि यदि सूचना किसी संज्ञेय अपराध के होने का खुलासा करती है तो दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 154 के तहत प्राथमिकी दर्ज करना अनिवार्य है। **ललिता कुमारी (ऊपर)** मामले में इस न्यायालय के फैसले के प्रासंगिक पैराग्राफ नीचे दिए गए हैं:

“114. यह सच है कि समाज के हित और किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा के बीच एक नाजुक संतुलन बनाए रखना पड़ता है। जैसा कि पहले ही ऊपर चर्चा की गई है, संहिता में पहले से ही पर्याप्त सुरक्षा उपाय प्रदान किए गए हैं जो झूठी प्राथमिकी दर्ज करने के मामले में किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता की विधिवत रक्षा करते हैं। साथ ही, धारा 154 का मसौदा पीड़ित और समाज के हित को ध्यान में रखते हुए तैयार किया गया था। इसलिए, हमारा दृढ़ विचार है कि संहिता की धारा 154 के तहत प्राथमिकियों का अनिवार्य पंजीकरण संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन नहीं होगा जैसा कि विभिन्न अधिवक्ताओं द्वारा कहा गया है।

अपवाद

115. हालाँकि, हम स्पष्ट रूप से मानते हैं कि संहिता की धारा 154 सभी संज्ञेय अपराध की प्राप्ति पर एफ. आई. आर. के अनिवार्य पंजीकरण को स्वीकार करती है, फिर भी, ऐसे उदाहरण हो सकते हैं जहाँ समय के साथ अपराधों की उत्पत्ति और नवीनता में परिवर्तन के कारण प्रारंभिक जांच की आवश्यकता हो सकती है। ऐसा ही एक उदाहरण डॉक्टरों की ओर से चिकित्सा लापरवाही से संबंधित आरोपों के मामले में है। केवल शिकायत में लगाए गए आरोपों के आधार पर एक चिकित्सा पेशेवर पर मुकदमा चलाना अनुचित और असमान होगा।

...

निष्कर्ष/निर्देश

120. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हम मानते हैं:

120.1. संहिता की धारा 154 के तहत एफआईआर दर्ज करना अनिवार्य है, यदि जानकारी किसी संज्ञेय अपराध के होने का खुलासा करती है और ऐसी स्थिति में कोई प्रारंभिक जांच की अनुमति नहीं है।

120.2. यदि प्राप्त जानकारी संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करती है, लेकिन जांच की आवश्यकता का संकेत देती है, तो प्रारंभिक जांच केवल यह पता लगाने के लिए की जा सकती है कि संज्ञेय अपराध का खुलासा किया गया है या नहीं।

120.3. यदि जांच में संज्ञेय अपराध का खुलासा होता है, तो एफआईआर दर्ज की जानी चाहिए। ऐसे मामलों में जहां प्रारंभिक जांच शिकायत को बंद करने में समाप्त होती है, इस तरह के समापन की प्रविष्टि की एक प्रति पहले सूचना देने वाले को तुरंत और एक सप्ताह के बाद नहीं दी जानी चाहिए। शिकायत को समाप्त करने तथा आगे कार्यवाही न करने के संक्षिप्त कारणों का प्रकटीकरण अनिवार्य है।"

[रेखांकित किया गया]

12. प्रारंभिक जांच का दायरा, जैसा कि उक्त फैसले में स्पष्ट किया गया है, उन स्थितियों तक सीमित है जहां प्राप्त जानकारी प्रथमदृष्टया संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करती है, लेकिन सत्यापन की आवश्यकता होती है। हालाँकि, जिन मामलों में सूचना से स्पष्ट

रूप से संज्ञेय अपराध का खुलासा होता है, वहाँ पुलिस को एफआईआर दर्ज करने से पहले प्रारंभिक जाँच करने का कोई विवेकाधिकार नहीं होता। **ललिता कुमारी (उपर्युक्त)** का निर्णय ऐसा कोई पूर्ण नियम स्थापित नहीं करता कि एफआईआर दर्ज करने से पहले हर मामले में प्रारंभिक जाँच अनिवार्य रूप से की ही जाए। बल्कि, यह उस स्थापित सिद्धांत की पुनः पुष्टि करता है कि जब प्राप्त सूचना से प्रथम दृष्टया संज्ञेय अपराध का पता चलता है, तो पुलिस अधिकारियों पर एफआईआर दर्ज करना अनिवार्य दायित्व है।

13. वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता के खिलाफ आरोप सार्वजनिक पद पर रहते हुए आधिकारिक पद के दुरुपयोग और भ्रष्ट प्रथाओं से संबंधित हैं। इस तरह के आरोप संज्ञेय अपराध की श्रेणी में आते हैं और ऐसे मामलों में प्राथमिकी दर्ज करने से पहले प्रारंभिक जांच की कोई कानूनी आवश्यकता नहीं है। अपीलकर्ता का यह तर्क कि उसके खिलाफ एक गुप्त उद्देश्य से लगातार प्राथमिकियां दर्ज की गई हैं, एक ऐसा मामला है जिसकी जांच और मुकदमे के दौरान जांच की जा सकती है। अपीलकर्ता के पास कानून के तहत पर्याप्त उपाय हैं, जिसमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत तुच्छ प्राथमिकियों को रद्द करने का अधिकार, जमानत के लिए आवेदन करने का अधिकार और उचित मंच के समक्ष जांच अधिकारियों की किसी भी अवैध कार्यवाही को चुनौती देने का अधिकार शामिल है।
14. इसके अलावा, यह न्यायालय अपीलकर्ता के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज करने पर रोक लगाने या उससे जुड़े भविष्य के सभी मामलों में प्रारंभिक जांच को अनिवार्य करने के लिए एक व्यापक निर्देश जारी नहीं कर सकता है। इस तरह का निर्देश न केवल सी. आर. पी. सी. के वैधानिक ढांचे के विपरीत होगा, बल्कि न्यायिक अतिक्रमण के समान भी होगा। जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा उचित रूप से देखा गया है, न्यायालय वैधानिक प्रावधानों को फिर से नहीं लिख सकते हैं या अतिरिक्त प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपाय पेश नहीं कर सकते हैं जो कानून द्वारा विचार नहीं किए गए हैं।
15. पूर्वगामी चर्चा को देखते हुए, हम वर्तमान अपील में कोई योग्यता नहीं पाते हैं। इसलिए, इसे खारिज किया जाता है। हालांकि, यह साफ़ किया जाता है कि यह आदेश अपीलकर्ता को लंबित एफ आई आर या भविष्य की कार्यवाही के संबंध में कानून के तहत उपलब्ध किसी भी अन्य उपाय का लाभ उठाने से नहीं रोकेगा।

मामले का परिणाम: याचिका खारिज कर दी गई।

†हेड नोट्स तैयार किए गए: अंकित ज्ञान

1 एफ. आई. आर.

2 (2014) 2 एससीसी 1

3 सीआरपीसी

अनुवादक: निर्मित